The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 2 | Issue 4 | April 2024
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

केदारनाथ अग्रवाल और निराला की कविताओं में किसान चेतना का स्वरूप

डॉ0 ओमप्रकाश सुंडा
अध्येता
हिंदी भाषा एवं साहित्य
Email: opsunda2408@gmail.com

द्विवेदी युग के पश्चात जब हिंदी कविता की मुख्यधारा में छायावादी शैली में कविताएँ लिखी जा रही थी उस समय भी अनेक पत्र-पत्रिकाओं में किसान कविताएँ छपती रही | छायावाद की मुख्यधारा के कवियों की भी बात की जाए तो निराला और पन्त में किसान चेतना की कविताएँ मिलती है | संख्या और यथार्थवादी दृष्टि से निराला की सर्वाधिक कविताएँ है जो किसानी को लेकर हैं | जिनकी मूल चेतना ही किसानी की है | बादल राग किता का 6 टवाँ भाग जिसमें कृषक शोषण के चक्र से मुक्ति की कामना में बादल को योद्धा बनाकर बुलाता हैं | बीज से लेकर सुप्त अँकुर तक तहस नहस मचा देना चाहते हैं | सम्पूर्ण कविता बदलाव की अधीरता से भरी पड़ी है –

"जीर्ण बाहू, है शीर्ण शरीर/ तुझे बुलाता कृषक अधीर, / ऐ विप्लव के वीर

चूस लिया है उसका सार,/ हाड़ मात्र ही हैं आधार / ऐ जीवन के पारावार|"[i]

हिंदी की दुनिया में किसानिन[1] पर निराला ने पहली कविता लिखी –'वे किसान नई बहू की आँखें'| न कोई विचार न कोई दर्शन | दस पंक्तियों में एक नव-विवाहिता किसान स्त्री की कमनीयता जो निर्जन आकाश के स्वप्न में भटक रही है | पति कौन होगा, कैसा होगा, वह नहीं जानती | किसानिन की निर्भय जिंदगी का दर्शन इस कविता में दिखता है -

"नहीं जानती जो अपने को खिली हुई / विश्व विभ से मिली हुई / नहीं जानती साम्राज्ञी अपने को,

वे किसान की नई बहु की आँखें / ज्यों हरीतिमा में बैठे दो विहग बंद कर पाँखें;

वे केवल निर्जन के दिशाकाश की / भीरु पकड़ जाने को है दुनिया के कर से –

बढ़े क्यों न वह पुलकित हो कैसे भी वर से|" [ii]

[1] 'किसानिन' शब्द यहाँ महिला किसान के लिए प्रयुक्त हुआ है.

'बेला' की कविता की 'जल्द-जल्द पैर बढ़ाओं' क्रांति के बाद लोकतान्त्रिक समाजवादी स्वप्न की अभिव्यक्ति है | 'कुत्ता भौंकने लगा' कविता में खेतिहर की जान कुत्ता शोषण कारी शक्तियों की तरफ भौंकता किसान ही है, जो केवल भौंक पा रहा है | उसको चंदा देना ही पड़ेगा, मना नहीं कर सकता क्योंकि –

"खेतिहरों में जान नहीं,

मन मारें सरे दरवाजें कोड़े ताप रहे हैं,

एक दूसरे से गिरे गिले की बात करते हुए"[iii]

यह तो शरीर की ताकत की बात है | उनका आर्थिक आधार खेती भी –

"बाहर ओले पड़ चुके हैं, / एक हफ्ते पहले पाला पड़ा था,

अरहर कब की मर चुकी थी, / हवा हाड़ तक बेंध जाती है, / गेहूँ के पेड़ ऐंठे पड़े हैं"[iv]

निराला की समझ किसानी को लेकर एकदम स्पष्ट है| वे न तो किसी दर्शन के चक्कर में पड़ते हैं और न ही रहस्य की आड़ लेकर यथार्थ से मुँह मोडते हैं | किसान (झींगुर) समझता है कि गोली किसके आदेश से चली हैं? नेता का भाषण जमींदार और अंग्रेजों के प्रति किसानों के रोष करने का साधन मात्र है| गाँधी के अहिंसावाद का पूर्णतया नकार यहाँ है |

"झींगुर ने कहा, / 'चूँकि हम इसन सभा के,

भाईजी के मददगार / जमींदार ने गोली चलवाई

पुलिस के हुक्म की तामीली को, / ऐसा यह पेच है"[v]

नंदकिशोर नवल ने इस कविता के मूल विचार को अभिव्यक्त करते हुए कहा है कि "इस कविता में कृषक जीवन का यथार्थ और गाँधीवाद दोनों आमने सामने है | उस यथार्थ के आगे गाँधीवाद कितना लाचार है, निराला ने यही इसमें दिखलाया है | पूरी कविता में एक नाटकीयता है, गाँधीवादी प्रवचन से लेकर किसानों पर गोली चलाने तक, बल्कि अंत में झींगुर के टिप्पणी करने तक|"[vi]

'डिप्टी साहब आये हैं' कविता किसानी के सामूहिक प्रतिरोध की सहज अभिव्यक्ति है | एक बार बदलू ने अन्याय का प्रतिकार किया| उसके बाद बिरादरी साथ देने को आ गई, जिसमें मनी कुम्हार है, कुल्ली तेली है, भकुआ चमार है, लच्छु नाई है, बली कहार भी है | किसान कबीलों की यह सामूहिकता और निस्वार्थ साथ देने की भावना भूमंडलीकरण की प्रक्रिया के बाद नष्ट हो गई है | गोड़इत लछिमन को रघुवर की उतराधिकारी भी स्वीकार नहीं करता और डर दिखाता है लेकिन बदलू –

"जमकर बदलू ने बदमाश को देखा, फिर

घूँसा तानकर नाक पर दिया |"[vii]

और इतने में सब टूट पड़े –

"बदल गया राव रंग / सब लोग सत्य कहने के लिए टूल गये |

तब तक सिपाही थानेदार के भेजे हुए / और दाम दे-दे कर माल ले गये,

सारा गाँव बाग़ की गवाही में बदल गया, / सही-सही बात कही" [viii]

शोषक को देवता बनाने की चालबाजी भी के लिए नैतिक आदर्शों का सहारा इतना छल भरा है कि देवत्त्व के साथ-साथ डर भी लगा रहता है | 'अहिर के मूसर' यानी ऐसी लाठी जो खोपड़ी खोल दे और 'दई के दूसर' देवरूप यानी डरों-

"अहीर के मूसर, ये दई के दूसर हैं,

इनसे एक घाट में भेड़ और भेड़िये / बिना वैरभाव के पानी पी रहे हैं,

इनके साथ और अफसरान हैं / जैसे दरोगाजी, / बीस सेर दूध दोनों घड़ों में जल्द भर |"[ix]

'छलांग मारता चला गया' में जमींदार की तुलना थाले के मेढ़क से की है | वह शोषणकारी है और भय उत्पन्न करने के लिए लाठी का गूला दरवाजें पर गाड़ जाता है, यहाँ तक कि जमींदार के खेत से किसान के पेड़ की डालियाँ भी छू जाए तो वह उस पर भी अधिकार जमा लेता है | लोग असहाय है, सामजिक और राजनीतिक सहारे भी इस समय किसी काम नहीं आ रहे | "विशालकाय राक्षस धर्म है और आध्यात्मिक नसें किसान की है| जैसा कि कहा गया है किसान बहुत धार्मिक होते हैं, इसलिए उनकी नसों में अध्यात्मिक रक्त प्रवाहित होता है | इस रक्त को चूसकर उक्त राक्षस उसे निष्प्राण बना देते हैं | इस तरह धर्म किसान की धर्म भावना का दोहन कर उसे तनकर खडा नहीं होने देता है |"[x]

"धर्म-कर्म लोग जन / जान पर खेलते हैं |

राक्षस विशालकाय / आध्यात्मिक नसों का / खून चूसता हुआ |" [xi]

और इस व्यवस्था की व्याप्ति का पता बताने के लिए कवि जमींदार को थाले का मेढ़क बताता है, जो हर जगह मूतता हुआ उचल कूद मचा रहा है | मेढ़क है, लेकिन वह हर जगह पसरा हुआ है –

"पास का मेढ़क थाले के पानी से उठकर

मूत-मूत कर छलांग मारता चला गया |"[xii]

'महंगू महँगा रहा' कविता में तत्कालीन राजनीतिक दोगलेपन का छलपूर्ण रूप दिखाया गया है | कविता में आए पंडित जी के रूप में आलोचकों ने नेहरू की छवि देखी हैं लेकिन उस समय के किसी भी कांग्रेसी नेता का चरित्रे ऐसा हो सकता था | नेहरू उस चेहरे का प्रतिनिधि है जिसका समाजवाद निराला की दृष्टि में विलासी और आभिजात्य है | नेता की खाल बहुत मोटी होती है जिसकी कई पर्तें होती है | लोकतान्त्रिक समाजवाद का स्वप्न दिखाने वाली कांग्रेस ने चुनाव में जमींदारों को ही जब टिकट देना आरम्भ कर दिया तब निराला लकुआ और महगू के बीच संवाद करवाते हैं और उनकी धूर्ततापूर्ण राजनीति की कलई खोल देते हैं –

"लकुआ ने महगू से पूछा, "क्यों हो, महगू / अपनी तो राय दो"

"आजकल, कहते हैं, ये भी अपने नहीं?" / महगू ने कहा- "हाँ, कम्पू में किरिया के

जो गोली लगी थी, / उसका कारण पंडित जी का शागिर्द है;

रामदास को कांग्रेस मैन बनानेवाला, / जो मिल का मालिक है |

यहाँ भी वह जमींदार, बाजू में लाग ही है |

कहते हैं इनके रूपये से ये चलते हैं, / कभी-कभी लाखों पर हाथ साफ करते हैं |"[xiii]

लेकिन आशा की किरण महगू को उन छिपे हुए लोगों से है | कौन है वे छिपपे हुए लोग ? अंग्रेज सरकार के विरोधी कांग्रेसी जन तो हो नहीं सकते क्योंकि वे तो इसी का हिस्सा बन चुके हैं ? क्या कम्युनिष्टों की और इशारा है ? हो सकता है निराला को उनमें कोई आशा की किरण नजर आती हो; चूँकि आगे सम्पति के सार्वजनिक वितरण पर निराला का ध्यान जाता है, तो इससे सिद्ध है कि उनका इशारा पका कम्युनिष्टों की तरफ ही था | और वो चाहे कुछ करे या न करे लेकिन महगू तो फिर भी महँगा ही रहने वाला है यानि वह नहीं बिकेगा| किसानों के शोषणकारी जमींदारो और सरकारों का विरोध करता ही रहेगा -

"जैसा तू लकुआ है, वैसा ही होना है,

बड़े-बड़े आदमी धन मान छोड़ेंगे, / तभी देश मुक्त है,

कवि जी ने पढ़ा था, जब तुम बदले नहीं, / अपने मन में कहा मैनें, मैं महगू हूँ

पैरों की धरती आकाश को भी चली जाए, / मैं कभी न बदलूँगा, इतना महँगा हूँगा |"[xiv]

नये पत्ते की एक और कविता जो 'वर्षा' शीर्षक से है, गाँव के बारिश के मौसम का वृतचित्र है | ऐसे ही 'कल्पना' पत्रिका में छपे एक गीत में किसान के दैनिक जीवन का आत्मीयता पूर्ण वर्णन है |

हिंदी साहित्य में किसानों पर संख्या की दृष्टि सर्वाधिक कविताएँ केदारनाथ अग्रवाल ने लिखी है | किसान को खेत से उठाकर सीधे राजनीतिक धरातल पर लाने का कार्य केदारनाथ अग्रवाल ने किया | मार्क्सवाद के वर्ग संघर्ष को केंद्र में रखकर इन्होंने किसानों पर गीत और कविताएँ लिखी जोकि उस समय लिख रहे किसी भी अन्य कवि से ज्यादा प्रमाणिक हैं | हालाँकि इनसे पूर्व सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' किसानी शोषण के नग्न यथार्थ पर कविताएँ लिख चुके थे लेकिन किसानी उनका मुख्य विषय नहीं रहा | मार्क्सवाद की चेतना से प्रभावित हिंदी का सम्पूर्ण प्रगतिवादी आन्दोलन शुद्ध राजनीतिक साहित्य रचता रहा है, जिसकी प्रेरणा के मूल में केवल और केवल वर्ग संघर्ष है, जबकि भारतीय समाज में वर्ग जैसी कोई स्थिति रही ही नहीं कभी | यह वर्ग संघर्ष साहित्य के पन्नों में विलास करता रहा जबकि किसान और मजदूर के जीवन की शोषणकारी और विडम्बना पूर्ण स्थिति का सही से बखान भी नहीं कर पाया | यह कार्य तब होता जब भारतीय किसान की सही स्थिति को समझ लिया जाता कि यहाँ वर्ग नहीं जातियाँ है जोकि हिन्दू समाज व्यवस्था की देन है | जाति ही समाज में मनुष्यता का स्तर तय करती है | वही शोषण के पीछे का सबसे बड़ा कारण है | वही गरीबी की मूल अवधारणा का सबसे उत्तम सिद्धांत निर्धारित करती रही हैं | हिंदी का मार्क्सवाद अभी भी उसी भ्रम में साहित्य रचे जा रहा है जिसका का कोई धरातल नहीं है | केदारनाथ अग्रवाल की कविताएँ भी उसी वर्ग संघर्ष की अवधारणा को नजर में रखते हुए लिखी गई है | उनके मूल्यांकन का कोई भी प्रयास भारतीय किसान अवधारणा को ध्यान में रखकर नहीं किया जा सकता है | हाँ, जो पारिवारिक किसानी के सौंदर्य बोध की कविताएँ हैं, उनके मूल्यांकन में शुद्ध साहित्यिक प्रतिमानों का प्रयोग किया जा सकता है |

केदारनाथ अग्रवाल के प्रथम काव्य संग्रह 'युग की गंगा' में 'धरती' जैसी कविताएँ आती है, जिसमें जमीन मालिकाना हक का अधिकारी किसानों को बताया गया है क्योंकि वही तप-गलकर उससे अन्न पैदा करता है | जमीन को शासकों की सम्पति माने से इंकार कर देता है –

"नहीं कृष्ण की, /नहीं राम की,/ नहीं भीम, नकुल सहदेव की / नहीं पार्थ की,

नहीं राव की, नहीं रंक की, / नहीं किसी की नहीं किसी की,

यह धरती है उस किसान की |"[xv]

मार्क्सवाद की भारतीय जनमानस को यह देन जरूर है कि वह धर्म और सत्ता की जटिल संरचना को समझने के सूत्र दे गया लेकिन इससे यह न समझना चाहिए कि उसने समाज की शोषणकारी संरचना में कोई बुनियादी बदलाव किए हैं और कोई नयी व्यवस्था की रचना की है| किसानों और मजदूरों के हक़ में वामपंथी राजनीति ने हिंदी किसान कविता में भी बुनियादी और क्रांतिकारी सहयोग दिया जिसको नक्सलबाड़ी आन्दोलन से उपजी कविताओं में देख सकते हैं |

'गेहूँ' कविता में गेहूँ के पौधे के जीवन पर एक सुंदर शब्द संरचना है | उसके हिलने डुलने से लेकर कटने तक की प्रक्रिया बहुत सुंदर बन पड़ी है | 'किसानों का गाना' में राजनीतिक संघर्ष 'कि आजादी उगाना है, गुलामी को मिटाना है' जैसी क्रान्तिकारी उक्तियाँ है |

'लोक और आलोक' संग्रह की कविता '110 का अभियुक्त' में विरोध करने वाले किसानों को झूठे मुकदमें में फँसाकर जेल में डालने और उसके प्रतिरोध की अभिव्यक्ति है | यह कविता भाषा में निराला की किसान कविताओं के करीब है| उसके खिलाफ गवाही देने वालों में समस्त'नौकरशाही के गुरगे, अफसरशाही के मुर्गे' हैं, जिनमें भू-कर उगहाने वाले, जमींदार, पटवारी, थाने का चौकीदार, पंडित, जोकि धार्मिक होने का नाटक करने वाला है लेकिन कोढ़ी और गँवार है, मादक चीजों का व्यापार करता है | इनकी झूठी गवाही देने पर 110 के अभियुक्त का क्रोध हाथी के जैसा है जो केले के वन को चीर डालता है; जैसे जनता सामंत के गढ़ को ध्वस्त कर देती है; जैसे समुन्द्र की लहरें थपेड़े मार कर छोटे जहाज को त्रस्त कर देती है| लेकिन नौकरशाही की स्याही से डिप्टी ने लिख दिया –

"यह भूमिपुत्र हैं अपराधी,/ यह चोर नकबनन है आदी,

यह चोर टिकाता है घर में/ इससे समाज को खतरा है |"[xvi]

'पूंजीपति और श्रमजीवी' कविता में बेटे को उतराधिकार में मिलने वाली वस्तुओं का चित्रण है| दोनों के अंतर को दिखाया है | 'किसान से' एक उदबोधनात्मक कविता है, जिसमें किसान से भविष्य पर नजर टिकाये रखने की सलाह है| 'पंख और पतवार' की 'विरोधी व्यक्तित्व' कविता में खुले व्यक्तित्व को दर्शाने के लिए 'धूप में धान के खेत की तरह' जैसे मुहावरों का प्रयोग किया गया है |

'फूल नहीं रंग बोलते हैं' संग्रह में 'खेत का दृश्य' तथा 'पैतृक संपति' कविता में किसान पुत्र पिता के मरने पर क्या पाता है तथा आजादी और आजाद देश की बातें उसके लिए क्या मायने रखती है, को समझाया गया है | 'कटुई के गीत' में कवि किसानों को अपने अधिकारों के लिए लड़ने का अस्त्र देता है | जैसे फसल काटी जाती है, वैसे ही हँसिया का प्रयोग शोषणकारी शक्तियों के खिलाफ करना चाहिए, उसमें हिंसा और अहिंसा नहीं देखनी चाहिए | इसके अलावा 'हम न रहेंगे', 'सिंह अयाली नाज', और 'धूप में गढ़ा धन' कविताएँ भी किसानी राजनीति के भविष्य को संबोधित करती है | 'कारण करण' कविता में किसान का फसल बर्बादी के बाद कर्ज चुकाने को घर द्वार बिक जाता है और अंत में खुद को लकवा मारें जाने जैसी व्यंजना अत्यंत मारक है |

कविता संग्रह 'जमुन जल तुम' की 'हरा होता धान'; संग्रह 'जो शिलाएँ तोड़ते हैं' की 'खेतिहर', 'हे मेरी तुम'; 'आत्मगंध' की खेत और खेत है'; 'अनहारी हरियाली' की 'बादल की बेटी, और 'क्रोध तुम्हारा पी लूँगा'; 'खुली आँखें : खुले डेने' की 'बाँस की बंशी'; 'कुहकी कोयल खड़े पेड़ की देह' की 'पिए ज्ञान को', 'अनाज न होने का', 'अकाल से लड़ता कमासिन', 'कट चुके खेत में', 'आँखों से हँसों', 'निर्धन का मन', 'ज्वार और

जीवन'(यह यौवन और जीवन का सुंदर गीत है, खेत और फसल को लेकर हिंदी में ऐसे गीत केदारनाथ अग्रवाल के अलावा कही नहीं मिलेंगे), 'हल हाथ उसी का' जैसी कविताएँ इस बात का सबूत है कि केदारनाथ अग्रवाल अपने समकालीन कवियों से किसानी चिन्तन की दिशा में कितने आगे थे |

केदारनाथ अग्रवाल के कविता संग्रह 'वसंत में प्रसन्न हुई पृथ्वी' में काफी कविताएँ हैं जो किसानी के विभिन्न रूपों को लेकर लिखी गई है | खेत और किसान का मन, फसल के पकने और 'लाटने' का उल्लास, धरती के मालिकाना हक के पक्ष में तर्क, सूने जानवरों द्वारा फसलों के नष्ट करने तथा उनकी पीड़ा, बैल चोरी की पीड़ा, युद्ध और खेतिहर का मन, गेहूँ और सरसों की फसलों से जीवन दर्शन तथा किसानी समाज में फैले व्यभिचार जैसे अनेक विषयों को लेकर ये कविताएँ लिखी गई है | 'तकवैया' कविता किसान और पौधों के सहज प्यार को समेटते चलती है –

"प्यारे-प्यारे पौधे / जिसको उसने खुद उपजाया

खून पिला दिल सा पाला / नाती पोती और पनाती सा दुलराया

उन सब पौधों को भारी तम ने ढाप लिया |"[xvii]

ये तम क़ानूनी रोक है, जिस पर तकवैया का जोर नहीं चलता | पशु उजाड़े तो भी वह रोक नहीं पाता | एक पशु आवारा जानवर है तो दूसरा राज्यतंत्र -

"कटु कानूनी रोक लगी है / हाथों में बंदूक नहीं है

गोली और बारूद नहीं है / हिंसक पशु धावा करते हैं,

खेती को चौपट करते हैं / लाचारी है – / तकवैया हैरान बहुत है !!

धरती टोते-टोते चलना,/ उठकर बढ़ना,/ लाठी से पशुबल से लड़ना

नामुमकिन है – नामुमकिन है |"[xviii]

'चन्दनवा चेती गाता है' कविता क्रांति गीत है | इसकी इंकलाबी चेती गाने से राजा और मंत्री की श्वसन प्रक्रियाओं पर असर होने लगा है | राजकीय बंधन टूट रहे हैं | 'किसानी गाथा' किसान के हक में धरती के के मालिक बन रहे जमींदार और राजाओं को ललकारा गया है | अब तक खूब शोषण कर लिया, कर उगाह-उगाह कर वृद्ध कर डाला धरती को; यह हमारी माता हा और हमीं से प्रसन्न है –

"हम जोते कोमल बन जाती माता धरती |

हम बोयें अँकुर उपजाती माता धरती ||

हम सींचे श्रम जल लहराए माता धरती |

अन्न-अन्न ही हमें लुटाएं माता धरती ||

जमींदार की नहीं, न राजा की धरती |

अब है आज हमारी धरती ||"[xix]

'चौड़ा सांड', 'देबी के बैल', 'खेतिहर', 'दर्पण टूटे', 'गेहूँ', 'सरसों', 'किसान स्तवन' आदि कविताएँ भी किसानी समस्याओं को लेकर लिखी गई है | केदारनाथ अग्रवाल प्रगतिवाद का सबसे बड़ा

---

[i] सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, निराला रचनावली 1, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2014, पृष्ठ 136
[ii] वही, पृष्ठ 363
[iii] सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, निराला रचनावली 2, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2014, पृष्ठ 188
[iv] वही, पृष्ठ 189
[v] वही
[vi] नंदकिशोर नवल, निराला: कृति से साक्षात्कार, राजकमल, 2014, पृष्ठ 480
[vii] सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, निराला रचनावली 2, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2014, पृष्ठ 202
[viii] वही
[ix] वही
[x] नंदकिशोर नवल, निराला: कृति से साक्षात्कार, राजकमल, 2014, पृष्ठ 482
[xi] सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, निराला रचनावली 2, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2014, पृष्ठ 200
[xii] वही
[xiii] वही, पृष्ठ 205
[xiv] वही
[xv] केदारनाथ अग्रवाल, युग की गंगा, साहित्य भंडार इलाहाबाद, पुन: मुद्रित संस्करण, 2009, पृष्ठ 55
[xvi] केदारनाथ अग्रवाल, लोक-आलोक, साहित्य भंडार इलाहाबाद, पुन: मुद्रित संस्करण, 2009, पृष्ठ 126
[xvii] केदारनाथ अग्रवाल, वसंत में प्रस्सन हुई पृथ्वी, साहित्य भंडार इलाहाबाद, पुन: मुद्रित संस्करण, 2009, पृष्ठ 26
[xviii] वही
[xix] वही, पृष्ठ 49